आर्य सत्संग गुटका

सन्ध्या, प्रार्थना, स्वस्तिवाचन, शान्तिकरण, प्रधान हवन, सङ्गठनसूक्त,
आर्यसमाज के नियम एवं मनोहारी भजन

[सार्वदेशिक धर्मार्य सभा से स्वीकृत पद्धति के आधार पर]

विजयकुमार गोविन्दराम हासानन्द
४४०८, नई सड़क, दिल्ली-६

संस्करण : १९९५

की
रा सब
ाता और
प्रकार सेवन
रा करता है कि तुम, जो

प्रार्थना

हे सर्वाधार, सर्वान्तर्यामिन् परमेश्वर ! तुम अनंत काल से अपने उपकारों की वर्षा किये जाते हो। प्राणिमात्र की सम्पूर्ण कामनाओं को तुम्हीं प्रतिक्षण पूर्ण करते हो। हमारे लिए जो कुछ शुभ है तथा हितकर है उसे तुम बिना माँगे ही स्वयं हमारी झोली में डालते जाते हो। तुम्हारे आँचल में अविचल शान्ति तथा आनन्द का वास है। तुम्हारी चरण-शरण की शीतल छाया में परम तृप्ति है, शाश्वत सुख की उपलब्धि है तथा सब अभिलषित पदार्थों की प्राप्ति है।

हे जगत्पिता परमेश्वर ! हम में सच्ची श्रद्धा तथा विश्वास हो। हम तुम्हारी अमृतमयी गोद में बैठने के अधिकारी बनें। अन्तःकरण को मलिन बनाने वाली स्वार्थ तथा संकीर्णता की सब क्षुद्र भावनाओं से हम ऊँचे उठें। काम, क्रोध, लोभ, मोह, ईर्ष्या, द्वेष इत्यादि कुटिल भावनाओं तथा सब मलिन वासनाओं को हम दूर करें। अपने हृदय की आसुरी प्रवृत्तियों के साथ युद्ध में विजय पाने के लिए हे प्रभो ! हम तुम्हें पुकारते हैं और तुम्हारा आँचल पकड़ते हैं।

हे परम पावन प्रभो ! हम में सात्विक प्रवृत्तियाँ जागरित हों। क्षमा, सरलता, स्थिरता, निर्भयता, अहङ्कारशून्यता इत्यादि शुभ भावनाएँ हमारी सम्पत्ति हों। हमारा शरीर स्वस्थ तथा परिपुष्ट हो, मन सूक्ष्म तथा उन्नत हो, आत्मा पवित्र तथा सुन्दर हो, तुम्हारे संस्पर्श से हमारी सारी शक्तियाँ विकसित हों। हृदय दया तथा सहानुभूति से भरा हो। हमारी वाणी में मिठास हो तथा दृष्टि में प्यार हो। विद्या और ज्ञान से हम परिपूर्ण हों। हमारा व्यक्तित्व महान् तथा विशाल हो।

हे प्रभो ! अपने आशीर्वादों की वर्षा करो। दीनातिदीनों के मध्य में विचरने वाले तुम्हारे चरणारविन्दों में हमारा जीवन अर्पित हो। इसे अपनी सेवा में लेकर हमें कृतार्थ करें।

ओ३म् शान्तिः ! शान्तिः ! ! शान्तिः ! ! !

प्रातःकाल की प्रार्थना के मन्त्र

विधि—सदा स्त्री पुरुष १० दश बजे शयन और रात्रि के पिछले प्रहर वा ४ बजे उठ के प्रथम हृदय में परमेश्वर का चिन्तन करके धर्म और अर्थ का विचार किया करें और धर्म और अर्थ के अनुष्ठान वा उद्योग करने में यदि कभी पीड़ा भी हो तथापि धर्मयुक्त पुरुषार्थ को कभी न छोड़ें किन्तु सदा शरीर और आत्मा की रक्षा के लिये युक्त आहार विहार, औषध-सेवन, सुपथ्य आदि से निरन्तर उद्योग करके व्यावहारिक और पारमार्थिक कर्त्तव्य कर्म की सिद्धि के लिए ईश्वर की स्तुति प्रार्थना और उपासना भी किया करें कि जिस परमेश्वर की कृपादृष्टि और सहाय से महाकठिन कार्य भी सुगमता से सिद्ध हो सके। इसके लिए निम्नलिखित मन्त्र हैं—

प्रातरग्निं प्रातरिन्द्रं हवामहे प्रातर्मित्रावरुणा प्रातरश्विना।
प्रातर्भगं पूषणं ब्रह्मणस्पतिं प्रातस्सोममुत रुद्रं हुवेम॥

—ऋ० मं० ७। सू० ४१। मं० १॥

अर्थ—प्रभात बेला में स्वप्रकाशस्वरूप परमैश्वर्य के दाता और परमैश्वर्ययुक्त प्राण उदान के समान प्रिय और सर्वशक्तिमान् सूर्य चन्द्र को जिसने उत्पन्न किया है उस परमात्मा की हम स्तुति करते हैं, और भजनीय सेवनीय ऐश्वर्ययुक्त पुष्टिकर्त्ता अपने उपासक, वेद और ब्रह्माण्ड के पालन करनेहारे अन्तर्यामी प्रेरक और, पापियों को रुलाने और सर्वरोगनाशक जगदीश्वर की हम स्तुति प्रार्थना करते हैं।

प्रातर्जितं भगमुग्रं हुवेम वयं पुत्रमदितेर्यो विधर्ता।
आध्रश्चिद्यं मन्यमानस्तुरश्चिद्राजा चिद्यं भगं भक्षीत्याह॥

—ऋ० मं० ७। सू० ४१। मं० २॥

पाँच घड़ी रात्रि रहे जयशील ऐश्वर्य के दाता तेजस्वी अन्तरिक्ष के सूर्य की उत्पत्ति करने और जो कि सूर्यादि लोकों को विशेष करके धारण करनेहारा सब ओर से धारणकर्त्ता जिस किसी का भी जाननेहारा दुष्टों का भी दण्डदाता और सबका प्रकाशक है, दण्डदाता जिस भगम् भजनीय स्वरूप को भी इस प्रकार सेवन करता हूँ, और इसी प्रकार भगवान् परमेश्वर सबको उपदेश करता है कि तुम, जो

मैं सूर्यादि जगत् का बनाने और धारण करनेहारा हूँ, उस मेरी उपासना को किया करो और मेरी आज्ञा में चला करो, जिससे तुम लोग सदा उन्नतिशील रहो, इससे हम लोग उसकी स्तुति करते हैं।

भग प्रणेतर्भग सत्यराधो भगेमां धियमुदवा ददन्नः।
भग प्र णो जनय गोभिरश्वैर्भग प्र नृभिर्नृवन्तः स्याम॥

—ऋ० मं० ७। सू० ४१। मं० ३॥

अर्थ—हे भजनीयस्वरूप सबके उत्पादक सत्याचार में प्रेरक ऐश्वर्यप्रद सत्यधन को देनेहारे सत्याचरण करनेहारों को ऐश्वर्यदाता आप परमेश्वर! हमको इस प्रज्ञा को दीजिये, और उसके दान से हमारी रक्षा कीजिये, आप गाय आदि और घोड़े आदि उत्तम पशुओं के योग से राज्यश्री को हमारे लिए प्रकट कीजिये। हे आपकी कृपा से हम लोग उत्तम मनुष्यों से बहुत वीर मनुष्यवाले अच्छे प्रकार होवें।

उतेदानीं भगवन्तः स्यामोत प्रपित्व उत मध्ये अह्नाम्
उतोदिता मघवन्त्सूर्यस्य वयं देवानां सुमतौ स्याम॥

—ऋ० मं० ७। सू० ४१। मं० ४॥

हे भगवन्! आपकी कृपा और अपने पुरुषार्थ से हम लोग इस समय प्रकर्षता, उत्तमता की प्राप्ति में और इन दिनों के मध्य में ऐश्वर्ययुक्त शक्तिमान् होवें, और हे परमपूजित असंख्यधन देनेहारे! सूर्यलोक के उदय में पूर्ण विद्वान् धार्मिक आप लोगों की अच्छी उत्तम प्रज्ञा और सुमति में हम लोग सदा प्रवृत्त रहें।

भग एव भगवाँ अस्तु देवास्तेन वयं भगवन्तः स्याम।
तं त्वा भग सर्व इज्जोहवीति स नो भग पुरएता भवेह॥

—ऋ० मं० ७। सू० ४१। मं० ५॥

अर्थ—हे सकलैश्वर्यसंपन्न जगदीश्वर! जिससे उस आपकी सब सज्जन निश्चय करके प्रशंसा करते हैं, सो आप हे ऐश्वर्यप्रद! इस संसार और हमारे गृहाश्रम में अग्रगामी और आगे-आगे सत्य कर्मों में बढ़ानेहारे हूजिए, जिससे सम्पूर्ण ऐश्वर्ययुक्त और समस्त ऐश्वर्य के दाता होने से आप ही हमारे पूजनीय देव हूजिए, उसी हेतु से हम विद्वान् लोग सकलैश्वर्यसम्पन्न होके सब संसार के उपकार में, तन, मन, धन से प्रवृत्त होवें।

॥ ओ३म् ॥

(१) ब्रह्मयज्ञ : वैदिक सन्ध्या

पहले जलादि से बाह्य शुद्धि, फिर राग-द्वेषादि के त्याग से भीतर की शुद्धि करनी चाहिए। तत्पश्चात् कुशा या हाथ से मार्जन करें। फिर कम-से-कम तीन प्राणायाम करें। पश्चात् पृष्ठ ११ पर लिखे 'गायत्री-मन्त्र' से शिखा को बाँधकर रक्षा करें।

अथाचमनमन्त्रः

ओं शन्नो देवीरभिष्टयऽआपो भवन्तु पीतये।
शंयोरभिस्रवन्तु नः॥ —यजुः० ३६।१२॥

सर्वव्यापक, सबका प्रकाशक और सबको आनन्द देनेवाला परमेश्वर मनोवाञ्छित सुख और पूर्णानन्द की प्राप्ति के लिए हमारा कल्याण करे तथा हम पर सुख की सर्वदा वृष्टि करे।

अथेन्द्रियस्पर्शमन्त्राः

पात्र में से बायें हाथ में जल लेकर दाहिने हाथ की मध्यमा और अनामिका अंगुलियों से स्पर्श करके प्रथम दक्षिण और पश्चात् वामपार्श्व में निम्न मन्त्रों से स्पर्श करें।

ओं वाक् वाक्। ओं प्राणः प्राणः। ओं चक्षुश्चक्षुः। ओं श्रोत्रं श्रोत्रम्। ओं नाभिः। ओं हृदयम्। ओं कण्ठः। ओं शिरः। ओं बाहुभ्यां यशोबलम्। ओं करतलकरपृष्ठे।

इन मन्त्रों से ईश्वर की प्रार्थनापूर्वक क्रमशः मुख, नासिका, नेत्र, श्रोत्र (कान), नाभि, हृदय, कण्ठ, सिर तथा भुजाओं के मूल-स्कन्ध और दोनों हाथों के ऊपर-तले स्पर्श करें। इसका अभिप्राय यह है कि ईश्वर की कृपा से हमारी ये सब ज्ञानेन्द्रियाँ और कर्मेन्द्रियाँ यश और बल से युक्त हों।

अथेश्वरप्रार्थनापूर्वकमार्जनमन्त्राः

अब बायें हाथ में जल लेकर मध्यमा और अनामिका अंगुली के अग्रभाग से नेत्रादि अंगों पर जल छिड़कें। इससे आलस्य दूर होता है। जो आलस्य न हो और जल प्राप्त न हो तो न छिड़कें।

ओं भूः पुनातु शिरसि। ओं भुवः पुनातु नेत्रयोः। ओं स्वः पुनातु कण्ठे। ओं महः पुनातु हृदये। ओं जनः पुनातु नाभ्याम्। ओं तपः पुनातु पादयोः। ओं सत्यं पुनातु पुनश्शिरसि। ओं खं ब्रह्म पुनातु सर्वत्र।

प्राणों से भी प्रिय परमात्मा सिर में पवित्र करे। दुःख-विनाशक परमात्मा आँखों में पवित्र करे। सदा आनन्दमय और सबको आनन्द देनेवाला परमात्मा कण्ठ में पवित्रता करे। सबसे महान् और सबका पूज्य परमात्मा हृदय में पवित्र करे। सर्वजगदुत्पादक परमात्मा नाभि को पवित्र करे। दुष्टों को सन्ताप देनेवाला परमात्मा पैरों में पवित्र करे। सत्यस्वरूप अविनाशी परमात्मा पुनः सिर में पवित्रता करे। सर्वव्यापक सर्वतोमहान् परमात्मा शरीर के सब अङ्गों में पवित्रता करे।

अथ प्राणायाममन्त्राः

पुनः शास्त्रोक्त रीति से प्राणायाम[1] की क्रिया करता जावे और अग्र

---

१. प्राणायाम के लिए 'सत्यार्थ प्रकाश' का तृतीय समुल्लास देखिए।

लिखित मन्त्रों का जप भी करता जावे। इस रीति से कम-से-कम तीन और अधिक-से-अधिक २१ प्राणायाम करे।

ओं भूः। ओं भुवः। ओं स्वः। ओं महः। ओं जनः। ओं तपः। ओं सत्यम्। —तैत्ति० १०। २७॥

हे परमपिता परमात्मन्! आप प्राणों से प्रिय, दुःख-विनाशक और सुखप्रदाता, आनन्दमय और आनन्ददाता, सर्वतोमहान्, सकल जगत् के उत्पत्तिकर्त्ता, दुष्टों को दण्ड देनेवाले, सदा एकरस, अखण्ड, अविनाशी और अपरिवर्तनशील हो।

इस प्रकार ईश्वर के गुणों का स्मरण करते हुए उसमें अपने-आपको मग्न करके अत्यन्त आनन्दित होना चाहिए।

अथाघमर्षणमन्त्राः

तत्पश्चात् सृष्टिकर्त्ता परमेश्वर और सृष्टिक्रम का विचार नीचे लिखे मन्त्रों से करे और जगदीश्वर को सर्वव्यापक, न्यायकारी, सर्वत्र सर्वदा सब जीवों के कर्मों के द्रष्टा को निश्चित मानके पाप की ओर अपने आत्मा और मन को कभी न जाने देवे, किन्तु धर्मयुक्त कर्मों में वर्तमान रखे।

—संस्कारविधि

ओम् ऋतञ्च सत्यञ्चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत।
ततो रात्र्यजायत ततः समुद्रो अर्णवः॥ १॥
समुद्रादर्णवादधि संवत्सरो अजायत।
अहोरात्राणि विदधद्विश्वस्य मिषतो वशी॥२॥
सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत्।
दिवञ्च पृथिवी चान्तरिक्षमथो स्वः॥ ३॥

—ऋ० १०। १९०। १-३

सर्वत्र प्रकाशमान ईश्वर के अनन्त सामर्थ्य से वेद-विद्या और त्रिगुणात्मक प्रकृति प्रकट हुई। उसी परमात्मा के सामर्थ्य से प्रलय उत्पन्न हुआ और उसी परमात्मा से महासमुद्र उत्पन्न हुए ॥ १ ॥

सारे ब्रह्माण्ड को सहज ही में अपने वश में रखनेवाले परमेश्वर ने समुद्र की उत्पत्ति के पश्चात् संवत्सर = वर्ष और फिर इनके विभाग, दिन, रात, क्षण, मुहूर्त्त आदि को रचा ॥ २ ॥

सब जगत् को धारण और पोषण करनेवाले परमात्मा ने जैसे पूर्व-कल्प में सूर्य और चन्द्र रचे, वैसे ही इस कल्प में भी रचे हैं। ठीक उसी प्रकार द्युलोक, पृथिवीलोक, अन्तरिक्ष और आकाश में जितने लोक हैं उनका निर्माण भी पूर्वकल्प के अनुसार ही किया है ॥ ३ ॥

अथाचमनमन्त्रः

ओं शन्नो देवीरभिष्टयऽआपो भवन्तु पीतये।
शंयोरभि स्रवन्तु नः ॥

इस मन्त्र से पुनः तीन आचमन करें। तदनन्तर गायत्र्यादि मंत्रों के अर्थ-विचारपूर्वक परमेश्वर की स्तुति अर्थात् परमेश्वर के गुण, उपकार का ध्यान कर पश्चात् प्रार्थना करें।

अथ मनसापरिक्रमामन्त्राः

अग्राङ्कित मन्त्रों को पढ़ते जाना और अपने मन से चारों ओर बाहर- भीतर परमात्मा को पूर्ण जानकर निर्भय, निश्शङ्क, उत्साही, आनन्दित तथा पुरुषार्थी रहना—

ओं प्राची दिगग्निरधिपतिरसितो रक्षितादित्या इषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः॥ १॥

दक्षिणा दिगिन्द्रोऽधिपतिस्तिरश्चिराजी रक्षिता पितर इषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः॥ २॥

प्रतीची दिग्वरुणोऽधिपतिः पृदाकू रक्षितान्न-मिषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः॥ ३॥

उदीची दिक् सोमोऽधिपतिः स्वजो रक्षिता-शनिरिषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो ज-भे दध्मः॥ ४॥

ध्रुवा दिग्विष्णुरधिपतिः कल्माषग्रीवो रक्षिता वीरुध इषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः॥ ५॥

ऊर्ध्वा दिग्बृहस्पतिरधिपतिः श्वित्रो रक्षिता वर्षमिषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः॥ ६॥ —अथर्व० ३। २७। ९—६

पूर्वदिशा या सामने की ओर ज्ञानस्वरूप परमात्मा सब जगत् का स्वामी है। वह बन्धन-रहित भगवान् सब ओर से रक्षा करता है। सूर्य की किरणें उसके बाण अर्थात् रक्षा के साधन हैं। उन सबके गुणों के अधिपति ईश्वर के गुणों को हम लोग बारम्बार नमस्कार करते हैं। जो ईश्वर के गुण और ईश्वर के रचे पदार्थ जगत् की रक्षा करनेवाले हैं और पापियों को बाणों के समान पीडा देनेवाले हैं उनको हमारा नमस्कार हो। जो अज्ञान से हमसे द्वेष करता है और जिससे हम द्वेष करते हैं उन सबकी बुराई को उन बाण-रूपी मुख के बीच में दग्ध कर देते हैं॥ १॥

दक्षिण दिशा में सम्पूर्ण ऐश्वर्ययुक्त परमात्मा सब जगत् का स्वामी है। कीट-पतंग, वृश्चिक आदि से वह परमेश्वर रक्षा करनेवाला है। ज्ञानी लोग उसकी सृष्टि में बाण के सदृश हैं। उन सबके····इत्यादि पूर्ववत्॥ २॥

पश्चिम दिशा में वरुण सबसे उत्तम परमेश्वर सबका राजा है। वह बड़े-बड़े अजगर सर्पादि विषधर प्राणियों से रक्षा करनेवाला है। पृथिव्यादि पदार्थ उसके बाण के सदृश हैं, अर्थात् श्रेष्ठों की रक्षा और दुष्टों की ताड़ना के निमित्त हैं। उन सबके····इत्यादि पूर्ववत्॥ ३॥

उत्तर दिशा में सोम, शान्त्यादि गुणों से आनन्द प्रदान करनेवाला जगदीश्वर सब जगत् का राजा है। वह अजन्मा और अच्छी प्रकार रक्षा करनेवाला है। विद्युत् उसके बाण हैं। उन सबके····इत्यादि पूर्ववत्॥ ४॥

नीचे की दिशा में विष्णु, सर्वत्र-व्यापक परमात्मा सब जगत् का राजा है। चित्रग्रीवा[१] वाला परमेश्वर सब प्रकार से रक्षा करता है। नाना प्रकार की वनस्पतियाँ उसके बाण सदृश हैं। उन सबके····इत्यादि पूर्ववत् ॥ ५ ॥

ऊपर की दिशा में बृहस्पति, वाणी, वेदशास्त्र और आकाश आदि बड़ी-बड़ी शक्तियों का स्वामी सबका अधिष्ठाता है। अपने शुद्ध ज्ञानमय स्वरूप से हमारा रक्षक है। वृष्टि उसके बाण-रूप अर्थात् रक्षा का साधन हैं। उन सबके····इत्यादि पूर्ववत् ॥ ६ ॥

अथोपस्थानमन्त्राः

अब परमात्मा का उपस्थान अर्थात् परमेश्वर के निकट मैं और मेरे निकट परमात्मा है, ऐसी बुद्धि करके—

ओम् उद्वयं तमसस्परि स्वः पश्यन्त उत्तरम्। देवं देवत्रा सूर्य्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम् ॥ १ ॥

—यजुः० ३५। १४ ॥

हे परमेश्वर! आप अन्धकार से पृथक् प्रकाशस्वरूप हैं। आप प्रलय के पश्चात् भी सदा विद्यमान रहते हैं। आप प्रकाशकों के प्रकाशक, चराचर के आत्मा और ज्ञानस्वरूप हैं। आपको सर्वश्रेष्ठ जानकर श्रद्धापूर्वक हम आपकी शरण में आये हैं। हे नाथ! अब आप ही हमारी रक्षा कीजिए।

उदु त्यं जातवेदसं देवं वहन्ति केतवः। दृशे विश्वाय सूर्य्यम् ॥ २ ॥

—यजुः० ३३। ३१ ॥

---

१. ईश्वर निराकार है। अथर्ववेद के अनुसार आलंकारिक भाषा में यह विराट् ब्रह्माण्ड उसका शरीर है, द्युलोक उसका मस्तक, भूमि उसके पैर और अन्तरिक्ष उसका धड़ है। भूमि पर उगनेवाले और अन्तरिक्ष में फैले नाना प्रकार के हरे वृक्ष मानो उसकी ग्रीवा हैं। (सम्पादक)

वेद की श्रुति और जगत् के नाना पदार्थ, झण्डों के समान उस दिव्यगुणयुक्त, सर्वप्रकाशक, चराचर के आत्मा, वेदप्रकाशक भगवान् को विश्वविद्या की प्राप्ति के लिए उत्तम रीति से जनाते और प्राप्त कराते हैं।

चित्रं देवानामुदगादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः। आप्रा द्यावापृथिवी अन्तरिक्ष सूर्य्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च स्वाहा ॥ ३ ॥

—यजुः० ७। ४२ ॥

जो सब देवों में श्रेष्ठ और बलवान् है, जो सूर्यलोक, प्राण, अपान और अग्नि का भी प्रकाशक है, जो द्युलोक, अन्तरिक्ष और पृथिवीलोक में व्यापक है, जो जड़ और चेतन जगत् का आत्मा = जीवन है, वह चराचर जगत् का प्रकाशक परमात्मा हमारे हृदयों में सदा प्रकाशित रहे।

तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्। पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शत ँ शृणुयाम शरदः शतं प्र ब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात् ॥ ४ ॥ —यजुः० ३६। २४ ॥

उस सबके द्रष्टा, धार्मिक विद्वानों के परम हितकारक, सृष्टि से पूर्व, पश्चात् और मध्य में सत्यस्वरूप से विद्यमान रहनेवाले और सर्वजगदुत्पादक ब्रह्म को हम सौ वर्ष तक देखें। उसके सहारे से हम सौ वर्ष तक जीएँ, सौ वर्ष तक उसका ही गुण-गान सुनें, उसी ब्रह्म का सौ वर्ष तक उपदेश करें, उसी की कृपा से सौ वर्ष तक किसी के अधीन न रहें। उसी ईश्वर की आज्ञापालन और कृपा से सौ वर्ष के उपरान्त भी हम लोग देखें, जीवें, सुनें-सुनावें और स्वतन्त्र रहें।

अथ गायत्री-मन्त्रः

ओं भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यम्भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्॥ —यजुः० ३६। ३॥

सच्चिदानन्द, सकल जगदुत्पादक, प्रकाशकों के प्रकाशक परमात्मा के सर्वश्रेष्ठ, पापनाशक तेज का हम ध्यान करते हैं। वह परमेश्वर हमारी बुद्धि को उत्तम प्रेरणा करे अर्थात् बुरे कर्मों से छुड़ाकर अच्छे कामों में प्रवृत्त करे।

अथ समर्पणम्

हे ईश्वर दयानिधे भवत्कृपयाऽनेन जपोपासनादिकर्मणा धर्मार्थकाममोक्षाणां सद्यः सिद्धिर्भवेन्नः॥

नमस्कार-मन्त्रः

ओं नमः शम्भवाय च मयोभवाय च
नमः शङ्कराय च मयस्कराय च
नमः शिवाय च शिवतराय च —यजुः० १६। ४१॥

जो सुखस्वरूप और संसार के उत्तम सुखों को देनेवाला, कल्याण का कर्त्ता, मोक्षरूप और धर्म के कामों को ही करनेवाला, अपने भक्तों को धर्म के कामों से युक्त करनेवाला, अत्यन्त मङ्गलरूप और धार्मिक मनुष्यों को मोक्ष देनेवाला है, उसको हमारा बारम्बार नमस्कार हो।

॥ इति सन्ध्योपासनविधिः ॥

□

भजन

ओं है जीवन हमारा, ओं प्राणाधार है।
ओं है कर्त्ता विधाता, ओं पालनहार है॥
ओं है दुःख का विनाशक, ओं सर्वानन्द है।
ओं है बल-तेजधारी, ओं करुणाकन्द है॥
ओं सबका पूज्य है, हम ओं का पूजन करें।
ओं ही के ध्यान से, हम शुद्ध अपना मन करें॥
ओं के गुरु-मन्त्र जपने से, रहेगा शुद्ध मन।
बुद्धि दिन-प्रतिदिन बढ़ेगी, धर्म में होगी लगन॥
ओं के जप से हमारा ज्ञान बढ़ता जायगा।
अन्त में यह ओं हमको मुक्ति तक पहुँचायगा॥

□

हे दयामय आपका हमको सदा आधार हो।
आपके भक्तों से ही भरपूर यह परिवार हो॥
छोड़ देवें काम को और क्रोध को मद-मोह को।
शुद्ध औ' निर्मल हमारा सर्वदा आचार हो॥
प्रेम से मिल-मिलके सारे गीत गायें आपके।
दिल में बहता आपका ही प्रेम-पारावार हो॥
जय पिता, जय-जय पिता, हम जय तुम्हारी गा रहे।
रात-दिन घर में हमारे आपका जयकार हो॥
पास अपने हो न धन तो उसकी कुछ परवा नहीं।
आपकी भक्ति से ही धनवान् यह परिवार हो॥

□

च और

(२) अथ देवयज्ञ : अग्निहोत्रम्

अथ ऋत्विग्वरणम्

यजमानोक्तिः—**ओमावसोः सदने सीद ।**

ऋत्विगुक्तिः—**ओं सीदामि ।**

यजमानोक्तिः—

ओं तत्सत् श्रीब्रह्मणो द्वितीयप्रहरार्द्धे वैवस्वत-मन्वन्तरेऽष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथम-चरणेऽमुक संवत्सरे···अयने···ऋतौ···मासे··· पक्षे···तिथौ···दिवसे···नक्षत्रे···लग्ने···मुहूर्ते···अत्र··· अहम्·· कर्मकरणाय भवन्तं वृणे ।

ऋत्विगुक्तिः—**वृतोऽस्मि ।**

आचमनमन्त्राः

ओम् अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा ॥१ ॥ इससे एक

ओम् अमृतापिधानमसि स्वाहा ॥२ ॥ इससे दूसरा

ओं सत्यं यशः श्रीर्मयि श्रीः श्रयतां स्वाहा ॥३ ॥

—तैत्तिरीय आरण्यक प्र० १० । अनु० ३२, ३५ ॥

इससे तीसरा आचमन करके तत्पश्चात् हथेली में जल लेकर नीचे लिखे मन्त्रों से पहले दाहिनी ओर, पश्चात् बायीं ओर के अंगों को स्पर्श करें !

अङ्गस्पर्शमन्त्राः

ओं वाङ्म आस्येऽस्तु ।। इस मन्त्र से मुख

ओं नसोर्मे प्राणोऽस्तु ।। इस मन्त्र से नासिका के दोनों छिद्र

ओम् अक्ष्णोर्मे चक्षुरस्तु ।। इस मन्त्र से दोनों आँख

ओं कर्णयोर्मे श्रोत्रमस्तु ।। इस मन्त्र से दोनों कान

ओं बाह्वोर्मे बलमस्तु ।। इस मन्त्र से दोनों बाहु

ओम् ऊर्वोर्म ओजोऽस्तु ।। इस मन्त्र से दोनों जंघा और

ओम् अरिष्टानि मेऽङ्गानि तनूस्तन्वा मे सह सन्तु ।।

—पारस्कर गृ० कण्डिका ३, सू० २५ ।।

इस मन्त्र से सारे शरीर का मार्जन करना, सारे शरीर पर जल के छींटे देना ।

□

अथेश्वरस्तुतिप्रार्थनोपासनामन्त्राः

सब संस्कारों के आदि में निम्नलिखित मन्त्रों के पाठ और अर्थ द्वारा एक विद्वान् वा बुद्धिमान् ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना स्थिरचित्त होकर परमात्मा में ध्यान लगाके करे, और सब लोग उसमें ध्यान लगाकर सुनें और विचारें—

ओं विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव ।
यद्भद्रं तन्न आ सुव ।। १ ।। —यजुः० ३० । ३ ।।

अर्थ—हे (सवितः) सकल जगत् के उत्पत्तिकर्त्ता, समग्र ऐश्वर्ययुक्त (देव) शुद्धस्वरूप, सब सुखों के दाता परमेश्वर ! आप कृपा

करके (नः) हमारे (विश्वानि) सम्पूर्ण (दुरितानि) दुर्गुण, दुर्व्यसन और दुःखों को (परा, सुव) दूर कर दीजिए। (यत्) जो (भद्रम्) कल्याणकारक गुण, कर्म, स्वभाव और पदार्थ है (तत्) वह सब हमको (आ सुव) प्राप्त कीजिए ॥ १ ॥

हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्। स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ २ ॥ —यजुः० १३ । ४ ॥

अर्थ—जो (हिरण्यगर्भः) स्वप्रकाशस्वरूप और जिसने प्रकाश करनेहारे सूर्य-चन्द्रमादि पदार्थ उत्पन्न करके धारण किये हैं, जो (भूतस्य) उत्पन्न हुए सम्पूर्ण जगत् का (जातः) प्रसिद्ध (पतिः) स्वामी (एकः) एक ही चेतनस्वरूप (आसीत्) था, जो (अग्रे) सब जगत् के उत्पन्न होने से पूर्व (समवर्त्तत) वर्तमान था, (सः) वह (इमाम्) इस (पृथिवीम्) भूमि (उत) और (द्याम्) सूर्यादि का (दाधार) धारण कर रहा है, हम लोग उस (कस्मै) सुखस्वरूप (देवाय) शुद्ध परमात्मा के लिए (हविषा) ग्रहण करने योग्य योगाभ्यास और अति प्रेम से (विधेम) विशेष भक्ति किया करें ॥ २ ॥

य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवाः। यस्य छायाऽमृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ ३ ॥ —यजुः० २५ । १३ ॥

अर्थ—(यः) जो (आत्मदाः) आत्मज्ञान का दाता, (बलदाः) शरीर, आत्मा और समाज के बल का देनेहारा, (यस्य) जिसकी (विश्वे) सब (देवाः) विद्वान् लोग (उपासते) उपासना करते हैं और (यस्य) जिसका (प्रशिषम्) प्रत्यक्ष सत्यस्वरूप शासन, न्याय अर्थात् शिक्षा को मानते हैं, (यस्य) जिसका (छाया) आश्रय ही (अमृतम्) मोक्षसुखदायक है (यस्य)

जिसका न मानना अर्थात् भक्ति न करना ही (मृत्युः) मृत्यु आदि दुःख का हेतु है, हम लोग उस (कस्मै) सुखस्वरूप (देवाय) सकल ज्ञान के देनेहारे परमात्मा की प्राप्ति के लिए (हविषा) आत्मा और अन्तःकरण से (विधेम) भक्ति अर्थात् उसी की आज्ञा पालन करने में तत्पर रहें ॥ ३ ॥

यः प्राणतो निमिषतो महित्वैक इद्राजा जगतो बभूव। य ईशे अस्य द्विपदश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ ४ ॥ —यजुः० २५ । ११ ॥

अर्थ—(यः) जो (प्राणतः) प्राणवाले और (निमिषतः) अप्राणिरूप (जगतः) जगत् का (महित्वा) अपनी अनन्त महिमा से (एक इत्) एक ही (राजा) विराजमान राजा (बभूव) है (यः) जो (अस्य) इस (द्विपदः) मनुष्यादि और (चतुष्पदः) गौ आदि प्राणियों के शरीर की (ईशे) रचना करता है, हम लोग उस (कस्मै) सुखस्वरूप (देवाय) सकल ऐश्वर्य को देनेहारे परमात्मा के लिए (हविषा) अपनी सकल उत्तम सामग्री से (विधेम) विशेष भक्ति करें ॥ ४ ॥

येन द्यौरुग्रा पृथिवी च दृढा येन स्व स्तभितं येन नाकः। यो अन्तरिक्षे रजसो विमानः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ ५ ॥ —यजुः० ३२ । ६ ॥

अर्थ—(येन) जिस परमात्मा ने (उग्रा) तीक्ष्ण स्वभाववाले (द्यौः) सूर्य आदि (च) और (पृथिवी) भूमि को (दृढा) धारण किया (येन) जिस जगदीश्वर ने (स्वः) सुख को (स्तभितम्) धारण किया और (येन) जिस ईश्वर ने (नाकः) दुःखरहित मोक्ष को धारण किया है (यः) जो (अन्तरिक्षे) आकाश में (रजसः) सब लोक-लोकान्तरों को (विमानः) विशेष मानयुक्त अर्थात् जैसे आकाश में पक्षी उड़ते हैं, वैसे सब लोकों का निर्माण करता और भ्रमण करता है, हम लोग उस (कस्मै) सुखदायक

(देवाय) कामना करने योग्य परब्रह्म की प्राप्ति के लिए (**हविषा**) सब सामर्थ्य से (**विधेम**) विशेष भक्ति करें ॥ ५ ॥

प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परि ता बभूव। यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम् ॥ ६ ॥ —ऋ० १० । १२१ । १० ॥

अर्थ—हे (**प्रजापते**) सब प्रजा के स्वामी परमात्मा ! (**त्वत्**) आपसे (**अन्यः**) भिन्न दूसरा कोई (**ता**) उन (**एतानि**) इन (**विश्वा**) सब (**जातानि**) उत्पन्न हुए जड़-चेतनादिकों को (**न**) नहीं (**परि बभूव**) तिरस्कार करता है, अर्थात् आप सर्वोपरि हैं। (**यत्कामः**) जिस-जिस पदार्थ की कामनावाले होके हम लोग भक्ति करें, (**ते**) आपका (**जुहुमः**) आश्रय लेवें और वाञ्छा करें (**तत्**) उस-उस की कामना (**नः**) हमारी (**अस्तु**) सिद्ध होवे, जिससे (**वयम्**) हम लोग (**रयीणाम्**) धनैश्वर्यों के (**पतयः**) स्वामी (**स्याम**) होवें ॥ ६ ॥

स नो बन्धुर्जनिता स विधाता धामानि वेद भुवनानि विश्वा। यत्र देवा अमृतमानशानास्तृतीये धामन्नध्यैरयन्त ॥ ७ ॥ —यजुः० ३२ । १० ॥

अर्थ—हे मनुष्यो ! (**सः**) वह परमात्मा (**नः**) अपने लोगों का (**बन्धुः**) भ्राता के समान सुखदायक, (**जनिता**) सकल जगत् का उत्पादक (**सः**) वह (**विधाता**) सब कामों का पूर्ण करनेहारा, (**विश्वा**) सम्पूर्ण (**भुवनानि**) लोकमात्र और (**धामानि**) नाम-स्थान-जन्मों को (**वेद**) जानता है और (**यत्र**) जिस (**तृतीये**) सांसारिक सुख-दुःख से रहित, नित्यानन्द-युक्त (**धामन्**) मोक्षस्वरूप, धारण करनेहारे परमात्मा में (**अमृतम्**) मोक्ष को (**आनशानाः**) प्राप्त होके (**देवाः**) विद्वान् लोग (**अध्यैरयन्त**) स्वेच्छा-पूर्वक विचरते हैं, वही परमात्मा अपना गुरु, आचार्य, राजा और न्यायाधीश है। अपने लोग मिलके सदा उसकी भक्ति किया करें ॥ ७ ॥

अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्। युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नम उक्तिं विधेम ॥ ८ ॥ —यजुः० ४० । १६ ॥

अर्थ—हे (अग्ने) स्वयंप्रकाश ज्ञानस्वरूप, सब जगत् के प्रकाश करनेहारे (देव) सकल सुखदाता परमेश्वर! आप जिससे (विद्वान्) सम्पूर्ण विद्यायुक्त हैं, कृपा करके (अस्मान्) हम लोगों को (राये) विज्ञान वा राज्यादि ऐश्वर्य की प्राप्ति के लिए (सुपथा) अच्छे धर्मयुक्त आप्त लोगों के मार्ग से (विश्वानि) सम्पूर्ण (वयुनानि) प्रज्ञान और उत्तम कर्म (नय) प्राप्त कराइये और (अस्मत्) हमसे (जुहराणम्) कुटिलतायुक्त (एनः) पापरूप कर्म को (युयोधि) दूर कीजिये। इस कारण हम लोग (ते) आपकी (भूयिष्ठाम्) बहुत प्रकार की स्तुतिरूप (नम उक्तिम्) नम्रतापूर्वक प्रशंसा (विधेम) सदा किया करें और सर्वदा आनन्द में रहें ॥ ८ ॥

॥इतीश्वरस्तुतिप्रार्थनोपासनाप्रकरणम्॥

(३) अथ स्वस्तिवाचनम्

अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्। होतारं रत्नधातमम्॥ १॥ —ऋ० १।१।१॥

स नः पितेव सूनवेऽग्ने सूपायनो भव। सचस्वा नः स्वस्तये॥ २॥ —ऋ० १।१।९॥

स्वस्ति नो मिमीतामश्विना भगः स्वस्ति देव्य-दितिरनर्वणः। स्वस्ति पूषा असुरो दधातु नः स्वस्ति द्यावापृथिवी सुचेतुना॥ ३॥ —ऋ० १।५१।११॥

स्वस्तये वायुमुप ब्रवामहै सोमं स्वस्ति भुवनस्य यस्पतिः। बृहस्पतिं सर्वगणं स्वस्तये स्वस्तय आदित्यासो भवन्तु नः॥ ४॥ —ऋ० ५।५१।१२॥

विश्वे देवा नो अद्या स्वस्तये वैश्वानरो वसुरग्निः स्वस्तये। देवा अवन्त्वृभवः स्वस्तये स्वस्ति नो रुद्रः पात्वंहसः॥ ५॥ —ऋ० ५।५१।१३॥

स्वस्ति मित्रावरुणा स्वस्ति पथ्ये रेवति। स्वस्ति न इन्द्रश्चाग्निश्च स्वस्ति नो अदिते कृधि॥ ६॥ —ऋ० ५।५१।१४॥

स्वस्ति पन्थामनु चरेम सूर्याचन्द्रमसाविव। पुनर्ददताघ्नता जानता सं गमेमहि ॥ ७ ॥

—ऋ० ५ । ५१ । १५ ॥

ये देवानां यज्ञियां यज्ञियानां मनोर्यजत्रा अमृता ऋतज्ञाः। ते नौ रासन्तामुरुगायमद्य यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥ ८ ॥ —ऋ० ७ । ३५ । १५ ॥

येभ्यो माता मधुमत्पिन्वते पयः पीयूषं द्यौरदितिरद्रिबर्हाः। उक्थशुष्मान् वृषभरान्त्स्वप्न-सस्ताँ आदित्याँ अनु मदा स्वस्तये ॥ ९ ॥

—ऋ० १० । ६३ । ३ ॥

नृचक्षसो अनिमिषन्तो अर्हणा बृहद्देवासो अमृतत्वमानशुः। ज्योतीरथा अहिमाया अनागसो दिवो वर्ष्माणं वसते स्वस्तये ॥ १० ॥

—ऋ० १० । ६३ । ४ ॥

सम्राजो ये सुवृधो यज्ञमाययुरपरिह्वृता दधिरे दिवि क्षयम्। ताँ आ विवास नमसा सुवृक्तिभिर्महो आदित्याँ अदितिं स्वस्तये ॥ ११ ॥—ऋ० १० । ६३ । ५ ॥

को वः स्तोम राधति यं जुजोषथ विश्वे देवासो मनुषो यतिष्ठन। को वोऽध्वरं तुविजाता अरं करद्यो नः पर्षदत्यंहः स्वस्तये ॥ १२ ॥ —ऋ० १० । ६३ । ६ ॥

येभ्यो होत्रां प्रथमामायेजे मनुः समिद्धाग्निर्मनसा सप्तहोतृभिः। त आदित्या अभयं शर्म यच्छत सुगा नः कर्त सुपथा स्वस्तये ॥ १३ ॥ —ऋ० १० । ६३ । ७ ॥

य ईशिरे भुवनस्य प्रचेतसो विश्वस्य स्थातुर्जगतश्च मन्तवः। ते नः कृतादकृतादेनसस्पर्यद्या देवासः पिपृता स्वस्तये ॥ १४ ॥ —ऋ० १० । ६३ । ८ ॥

भरेष्विन्द्रं सुहवं हवामहेंऽहोमुचं सुकृतं दैव्यं जनम्। अग्निं मित्रं वरुणं सातये भगं द्यावापृथिवी मरुतः स्वस्तये ॥ १५ ॥ —ऋ० १० । ६३ । ९ ॥

सुत्रामाणं पृथिवीं द्यामनेहसं सुशर्माणमदितिं सुप्रणीतिम्। दैवीं नावं स्वरित्रामनागसमस्रवन्तीमा रुहेमा स्वस्तये ॥ १६ ॥ —ऋ० १० । ६३ । १० ॥

विश्वे यजत्रा अधि वोचतोतये त्रायध्वं नो दुरेवाया अभिह्रुतः। सत्यया वो देवहूत्या हुवेम शृण्वतो देवा अवसे स्वस्तये ॥ १७ ॥ —ऋ० १० । ६३ । ११ ॥

अपामीवामप विश्वामनाहुतिमपारातिं दुर्विदत्रामघायतः। आरे देवा द्वेषो अस्मद्युयोतनोरु णः शर्म यच्छता स्वस्तये ॥ १८ ॥ —ऋ० १० । ६३ । १२ ॥

अरिष्टः स मर्तो विश्व एधते प्र प्रजाभिर्जायते धर्मणस्परि। यमादित्यासो नयथा सुनीतिभिरति विश्वानि दुरिता स्वस्तये ॥ १९ ॥—ऋ० १० । ६३ । १३ ॥

यं देवासोऽवथ वाजसातौ यं शूरसाता मरुतो हिते धने। प्रातर्यावाणं रथमिन्द्र सानसिमरिष्यन्तमा रुहेमा स्वस्तये ॥ २० ॥ —ऋ० १० । ६३ । १४ ॥

स्वस्ति नः पथ्यासु धन्वसु स्वस्त्यप्सु वृजने स्वर्वति। स्वस्ति नः पुत्रकृथेषु योनिषु स्वस्ति राये मरुतो दधातन ॥ २१ ॥ —ऋ० १० । ६३ । १५ ॥

स्वस्तिरिद्धि प्रपथे श्रेष्ठा रेक्णस्वत्यभि या वाममेति। सा नो अमा सो अरणे नि पातु स्वावेशा भवतु देवगोपा ॥ २२ ॥ —ऋ० १० । ६३ । १६ ॥

इषे त्वोर्जे त्वा वायव स्थ देवो वः सविता प्रार्पयतु श्रेष्ठतमाय कर्मणऽआप्यायध्वमघ्न्याऽइन्द्राय भागं प्रजावतीरनमीवाऽअयक्ष्मा मा व स्तेन ऽईशत माघशँसो ध्रुवाऽअस्मिन् गोपतौ स्यात बह्वीर्यजमानस्य पशून् पाहि ॥ २३ ॥ —यजुः० १ । १ ॥

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतोऽदब्धासोऽअपरीतासऽउद्भिदः। देवा नो यथा सदमिद्वृधेऽअसन्नप्रायुवो रक्षितारो दिवे दिवे ॥ २४ ॥

—यजुः० २५ । १४ ॥

देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयतां देवानाꣳ रातिरभि नो निवर्त्तताम्। देवानाꣳ सख्यमुपसेदिमा वयं देवा नऽआयुः प्रतिरन्तु जीवसे ॥ २५ ॥ —यजुः० २५ । १५ ॥

तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियञ्जिन्वमवसे हूमहे वयम्। पूषा नो यथा वेदसामसद्वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये ॥ २६ ॥ —यजुः० २५ । १८ ॥

स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो ऽअरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु ॥ २७ ॥ —यजुः० २५ । १९ ॥

भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः। स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाꣳसस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः ॥ २८ ॥ —यजुः० २५ । २१ ॥

अग्ने आ याहि वीतये गृणानो हव्यदातये। नि होता सत्सि बर्हिषि ॥ २९ ॥—साम० पूर्वा० प्रपा० १, मन्त्र १ ॥

त्वमग्ने यज्ञानां होता विश्वेषां हितः। देवेभिर्मानुषे जने ॥ ३० ॥ —साम० पूर्वा० प्रपा० १, मन्त्र २ ॥

ये त्रिषप्ताः परियन्ति विश्वा रूपाणि बिभ्रतः। वाचस्पतिर्बला तेषां तन्वो अद्य दधातु मे ॥ ३१ ॥

—अथर्व० १ । १ । १ ॥

॥ इति स्वस्तिवाचनम् ॥

(४) अथ शान्तिकरणम्

शं न इन्द्राग्नी भवतामवोभिः शं न इन्द्रावरुणा रातहव्या। शमिन्द्रासोमा सुविताय शं योः शं न इन्द्रापूषणा वाजसातौ ॥ १ ॥ —ऋ० ७। ३५। १ ॥

शं नो भगः शमु नः शंसो अस्तु शं नः पुरंध्धिः शमु सन्तु रायः। शं नः सत्यस्य सुयमस्य शंसः शं नो अर्य्यमा पुरुजातो अस्तु ॥ २ ॥ —ऋ० ७। ३५। २ ॥

शं नो धाता शमु धर्त्ता नो अस्तु शं न उरूची भवतु स्वधाभिः। शं रोदसी बृहती शं नो अद्रिः शं नो देवानां सुहवानि सन्तु ॥ ३ ॥ —ऋ० ७। ३५। ३ ॥

शं नो अग्निर्ज्योतिरनीको अस्तु शं नो मित्रावरुणावश्विना शम्। शं नः सुकृतां सुकृतानि सन्तु शं न इषिरो अभि वातु वातः ॥ ४ ॥

—ऋ० ७। ३५। ४ ॥

शं नो द्यावापृथिवी पूर्वहूतौ शमन्तरिक्षं दृशये नो अस्तु। शं न ओषधीर्वनिनो भवन्तु शं नो रजसस्पतिरस्तु जिष्णुः ॥ ५ ॥ —ऋ० ७। ३५। ५ ॥

शं न इन्द्रो वसुभिर्देवो अस्तु शमादित्येभिर्वरुणः सुशंसः। शं नो रुद्रो रुद्रेभिर्जलाषः शं नस्त्वष्टा ग्नाभिरिह शृणोतु ॥ ६ ॥ —ऋ० ७। ३५। ६

शं नः सोमो भवतु ब्रह्म शं नः शं नो ग्रावाणः शमु सन्तु यज्ञाः। शं नः स्वरूणां मितयो भवन्तु शं नः प्रस्वः शम्वस्तु वेदिः॥ ७॥ —ऋ० ७। ३५। ७॥

शं नः सूर्य उरुचक्षा उदेतु शं नश्चतस्रः प्रदिशो भवन्तु। शं नः पर्वता ध्रुवयो भवन्तु शं नः सिन्धवः शमु सन्त्वापः॥ ८॥ —ऋ० ७। ३५। ८॥

शं नो अदितिर्भवतु व्रतेभिः शं नो भवन्तु मरुतः स्वर्काः। शं नो विष्णुः शमु पूषा नो अस्तु शं नो भवित्रं शम्वस्तु वायुः॥ ९॥ —ऋ० ७। ३५। ९॥

शं नो देवः सविता त्रायमाणः शं नो भवन्तूषसो विभातीः। शं नः पर्जन्यो भवतु प्रजाभ्यः शं नः क्षेत्रस्य पतिरस्तु शम्भुः॥ १०॥ —ऋ० ७। ३५। १०॥

शं नो देवा विश्वदेवा भवन्तु शं सरस्वती सह धीभिरस्तु। शमभिषाचः शमु रातिषाचः शं नो दिव्याः पार्थिवाः शं नो अप्याः॥ ११॥

—ऋ० ७। ३५। ११॥

शं नः सत्यस्य पतयो भवन्तु शं नो अर्वन्तः शमु सन्तु गावः। शं न ऋभवः सुकृतः सुहस्ताः शं नो भवन्तु पितरो हवेषु॥ १२॥

—ऋ० ७। ३५। १२॥

शं नो अज एकपादेवो अस्तु शं नोऽहिर्बुध्न्यः

शं समुद्रः। शं नो अपां नपात्पेरुरस्तु शं नः पृश्निर्भवतु देवगोपा॥ १३॥ —ऋ० ७। ३५। १३॥

इन्द्रो विश्वस्य राजति। शं नो अस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे॥ १४॥ —यजुः० ३६। ८॥

शं नो वातः पवताꣳ शं नस्तपतु सूर्य्यः। शं नः कनिक्रदद्देवः पर्जन्योऽअभि वर्षतु॥ १५॥ —यजुः० ३६। १०॥

अहानि शं भवन्तु नः शꣳ रात्रीः प्रति धीयताम्। शं न इन्द्राग्नी भवतामवोभिः शं नऽइन्द्रावरुणा रातहव्या। शं नऽ इन्द्रापूषणा वाजसातौ शमिन्द्रासोमा सुविताय शꣳ योः॥ १६॥ —यजुः० ३६। ११॥

शं नो देवीरभिष्टयऽ आपो भवन्तु पीतये। शꣳयोरभि स्रवन्तु नः॥ १७॥ —यजुः० ३६। १२॥

द्यौः शान्तिरन्तरिक्षꣳ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः। वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वꣳ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि॥ १८॥ —यजुः० ३६। १७॥

तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्र मुच्चरत्। पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतꣳ शृणुयाम शरदः शतं प्रब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात्॥ १९॥ —यजुः० ३६। २४॥

यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं तदु सुप्तस्य तथैवैति। दूरङ्गमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥ २० ॥ —यजुः० ३४ । १ ।

येन कर्माण्यपसो मनीषिणो यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः। यदपूर्वं यक्षमन्तः प्रजानां तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥ २१ ॥ —यजुः० ३४ । २ ॥

यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु। यस्मान्न ऋते किञ्चन कर्म क्रियते तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥ २२ ॥ —यजुः० ३४ । ३ ॥

येनेदं भूतं भुवनं भविष्यत्परिगृहीतममृतेन सर्वम्। येन यज्ञस्तायते सप्तहोता तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥ २३ ॥ —यजुः० ३४ । ४ ॥

यस्मिन्नृचः साम यजूंष्यृषि यस्मिन् प्रतिष्ठिता रथनाभाविवाराः। यस्मिँश्चित्तं सर्वमोतं प्रजानां तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥ २४ ॥ —यजुः० ३४ । ५ ॥

सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान्नेनीयतेऽभीशुभिर्वाजिन इव। हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥ २५ ॥* —यजुः० ३४ । ६ ॥

स नः पवस्व शं गवे शं जनाय शमर्वते। शं राजन्नोषधीभ्यः ॥ २६ ॥ —साम० उत्तरा० १ । ३ ॥

---

* टिप्पणी—मन्त्र २० से २५ तक के मन्त्र रात्रि में सोते समय बोलने के भी हैं।

अभयं नः करत्यन्तरिक्षमभयं द्यावापृथिवी उभे इमे। अभयं पश्चादभयं पुरस्तादुत्तरादधरादभयं नो अस्तु ॥२७॥ —अथर्व० १९।१५।५॥

अभयं मित्रादभयममित्रादभयं ज्ञातादभयं परोक्षात्। अभयं नक्तमभयं दिवा नः सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु ॥२८॥ —अथर्व० १९।१५।६॥

॥ इति शान्तिकरणम् ॥

अग्न्याधान-मन्त्रः

ओं भूर्भुवः स्वः।

—गोभिल० गृ० प्र० १, खं १, सू० ११॥

इस मन्त्र का उच्चारण करके ब्राह्मण, क्षत्रिय वा वैश्य के घर से अग्नि ला अथवा घृत का दीपक जला, उससे कपूर में लगा, किसी एक पात्र में धरकर उसमें छोटी-छोटी लकड़ी लगाके यजमान वा पुरोहित उस पात्र को दोनों हाथों से उठा, यदि गर्म हो तो चिमटे से पकड़कर अगले मन्त्र से आधान करे। वह मन्त्र यह है—

ओं भूर्भुवः स्वर्द्यौरिव भूम्ना पृथिवीव वरिम्णा। तस्यास्ते पृथिवि देवयजनि पृष्ठेऽग्निमन्नादमन्नाद्यायादधे॥ —यजुः० ३।५॥

इस मन्त्र से वेदी के बीच में अग्नि को धरकर उसपर छोटे-छोटे काष्ठ और थोड़ा कपूर धर, अगला मन्त्र पढ़के व्यजन से अग्नि प्रदीप्त करे।

अग्नि प्रदीप्त करने का मन्त्र

ओम् उद् बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि त्वमिष्टापूर्त्ते सꣳसृजेथामयं च। अस्मिन्त्सधस्थे अध्युत्तरस्मिन् विश्वे देवा यजमानश्च सीदत ॥ —यजुः० १५ । ५४ ॥

जब अग्नि समिधाओं में प्रविष्ट होने लगे तब चन्दन की अथवा पलाशादि की तीन लकड़ी आठ-आठ अंगुल की, घृत में डुबा उनमें से एक-एक निकाल नीचे लिखे मन्त्रों से एक-एक समिधा अग्नि में चढ़ावें। वे मन्त्र ये हैं—

समिदाधान के मन्त्र

अयन्त इध्म आत्मा जातवेदस्तेनेध्यस्व वर्द्धस्व चेद्ध वर्द्धय चास्मान् प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन समेधय स्वाहा ॥ इदमग्नये जातवेदसे—इदं न मम ॥ १ ॥ इससे पहली

—आश्व० गृह्य० १ । १० । १२ ॥

ओं समिधाग्निं दुवस्यत घृतैर्बोधयतातिथिम्। आस्मिन् हव्या जुहोतन स्वाहा ॥ इदमग्नये—इदं न मम ॥ २ ॥ —यजुः० ३ । १ ॥

इससे और

सुसमिद्धाय शोचिषे घृतं तीव्रं जुहोतन। अग्नये जातवेदसे स्वाहा ॥ इदमग्नये जातवेदसे—इदं न मम ॥ ३ ॥ —इस मन्त्र से अर्थात् दोनों मन्त्रों से दूसरी समिधा चढ़ाएँ। —यजुः० ३ । २ ॥

तन्त्वा समिद्भिरङ्गिरो घृतेन वर्द्धयामसि। बृहच्छोचा यविष्ठ्य स्वाहा॥ इदमग्नयेऽङ्गिरसे—इदं न मम॥ ४॥ —यजुः० ३। ३॥

इस मन्त्र से तीसरी समिधा की आहुति देवें।

इन मन्त्रों से समिदाधान करके नीचे लिखे मन्त्र से एक-एक करके पाँच घृत की आहुति देनी—

घृताहुति-मन्त्रः

ओम् अयन्त इध्म आत्मा जातवेदस्तेनेध्यस्व वर्द्धस्व चेद्ध वर्द्धय चास्मान् प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन समेधय स्वाहा॥ इदमग्नये जातवेदसे—इदन्न मम॥ १॥ —आश्व० गृह्य० १। १०। १२॥

तत्पश्चात् अञ्जलि में जल लेके वेदी के पूर्व आदि दिशा और चारों ओर छिड़कावें इसके ये मन्त्र हैं—

जल-प्रसेचन-मन्त्राः

ओम् अदितेऽनुमन्यस्व। —इससे पूर्व दिशा में

ओम् अनुमतेऽनुमन्यस्व। —इससे पश्चिम दिशा में

ओं सरस्वत्यनुमन्यस्व। —इससे उत्तर दिशा में

—गोभि० गृह्य० १। ३। १—३॥

ओं देव सवितः प्र सुव यज्ञं प्र सुव यज्ञपतिं भगाय। दिव्यो गन्धर्वः केतपूः केतं नः पुनातु वाचस्पतिर्वाचं नः स्वदतु॥ —यजु० ३०। १॥

इस मन्त्र से वेदी के चारों ओर जल छिड़कावें।[१]

इसके पश्चात् मुख्य होम के आदि और अन्त में जो आहुतियाँ दी जाती हैं उनमें से यज्ञ-कुण्ड के उत्तर-भाग में जो एक आहुति और यज्ञकुण्ड के दक्षिण-भाग में दूसरी आहुति देनी होती है, उन्हें "आघारावाज्याहुति" कहते है, और जो कुण्ड के मध्य में आहुतियाँ दी जाती हैं उनका नाम "आज्यभागाहुति" है। घृतपात्र में से स्रुवा को भर अंगूठा, मध्यमा, अनामिका से स्रुवा को पकड़ के—

आघारावाज्याहुति-मन्त्रः

ओम् अग्नये स्वाहा। इदमग्नये—इदं न मम॥

इस मन्त्र से वेदी के उत्तर-भाग अग्नि में

ओं सोमाय स्वाहा।

इदं सोमाय—इदं न मम॥

—गोभि० गृह्य० १।८।१-३॥

इस मन्त्र से वेदी के दक्षिण-भाग में प्रज्वलित समिधा पर आहुति देनी, तत्पश्चात्—

आज्यभागाहुतिमन्त्रः

ओं प्रजापतये स्वाहा। इदं प्रजापतये—इदं न मम॥

ओम् इन्द्राय स्वाहा। इदमिन्द्राय—इदं न मम।

इन दोनों मन्त्रों से वेदी के मध्य में दो आहुति दें।

---

१. जल छिड़कने की विधि ऐसी है, पूर्व में—दक्षिण से उत्तर की ओर, पश्चिम में—दक्षिण से उत्तर की ओर, उत्तर में—पश्चिम से पूर्व की ओर तथा 'देव सवितः' मन्त्र से पूर्व से आरम्भ करके वेदी के चारों ओर जल छिड़कना चाहिए। —सम्पादक

प्रातःकालीन प्रधान होम : 'मुख्य होम'

आघारावाज्यभागाहुति चार देके नीचे लिखे हुए मन्त्रों से प्रातःकाल अग्निहोत्र करें ।

प्रातःकाल आहुति के मन्त्र

ओं सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा ॥ १ ॥

—यजुः० ३ । ९ ॥

ओं सूर्यो वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा ॥ २ ॥

—यजुः० ३ । ९ ॥

ओं ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा ॥ ३ ॥

—यजुः० ३ । ९ ॥

ओं सजूर्देवेन सवित्रा सजूरुषसेन्द्रवत्या । जुषाणः सूर्यो वेतु स्वाहा ॥ ४ ॥ —यजुः० ३ । १० ॥

प्रातः-सायंकालीन आहुति-मन्त्राः

अब निम्नलिखित मन्त्रों से प्रातः-सायं आहुति देनी चाहिए—

ओं भूरग्नये प्राणाय स्वाहा । इदमग्नये प्राणाय—इदं न मम ॥ १ ॥

ओं भुवर्वायवेऽपानाय स्वाहा । इदं वायवेऽपानाय—इदं न मम ॥ २ ॥

ओं स्वरादित्याय व्यानाय स्वाहा । इदमादित्याय व्यानाय—इदं न मम ॥ ३ ॥

ओं भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः प्राणापान-व्यानेभ्यः स्वाहा। इदमग्निवाय्वादित्येभ्यः प्राणा-पानव्यानेभ्यः—इदं न मम ॥ ४ ॥

ओम् आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरों स्वाहा ॥ ५ ॥

ओं यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते। तया मामद्य मेधयाऽग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा ॥ ६ ॥

—यजुः० ३२ । १४ ॥

ओं विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव। यद् भद्रं तन्न आ सुव स्वाहा ॥ ७ ॥ —यजुः० ३० । ३ ॥

ओम् अग्ने नय सुपथा रायेऽअस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्। युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नमऽउक्तिं विधेम स्वाहा ॥ ८ ॥

—यजुः० ४० । १६ ॥

सायंकालीन होम-मन्त्राः (आहिताग्नि होमः)

अब नीचे लिखे मन्त्र सायंकाल में अग्निहोत्र के जानो—

ओम् अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा ॥ १ ॥

—यजुः० ३ । ९ ॥

ओम् अग्निर्वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा ॥ २ ॥

—यजुः० ३ । ९ ॥

अब तीसरे मन्त्र को मन में उच्चारण करके तीसरी आहुति देनी—

ओम् अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा ॥ ३ ॥

ओं सजूर्देवेन सवित्रा सजूरात्र्येन्द्रवत्या।
जुषाणो अग्निर्वेतु स्वाहा॥ ४॥ —यजुः० ३।१०॥

ओं भूरग्नये प्राणाय स्वाहा॥ १॥

ओं भुवर्वायवेऽपानाय स्वाहा॥ २॥

ओं स्वरादित्याय व्यानाय स्वाहा॥ ३॥

ओं भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः प्राणापान-व्यानेभ्यः स्वाहा॥ ४॥

ओम् आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरों स्वाहा॥ ५॥

ओं सर्वं वै पूर्ण ँ स्वाहा॥

इससे एक-एक करके तीन पूर्णाहुति देवें।

□

[यदि सायंकाल पृथक् यज्ञ करना हो तो निम्न मन्त्रों से आहुति दें]

सायंकाल के होम की पूर्ण विधि

आचमन से लेकर आघारावाज्यभागाहुति देकर नीचे लिखे प्रकार अग्निहोत्र करें—

ओम् अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा॥ १॥

ओम् अग्निर्वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा॥ २॥

अब तीसरे मन्त्र का मन में उच्चारण करके तीसरी आहुति देनी चाहिए—

ओम् अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा॥ ३॥

ओं सजूर्देवेन सवित्रा सजूरात्र्येन्द्रवत्या। जुषाणो अग्निर्वेतु स्वाहा ॥ ४ ॥

प्रातः-सायंकालीन आहुतिमन्त्राः

ओं भूरग्नये प्राणाय स्वाहा। इदमग्नये प्राणाय—इदं न मम ॥ १ ॥

ओं भुवर्वायवेऽपानाय स्वाहा। इदं वायवेऽपानाय—इदं न मम ॥ २ ॥

ओं स्वरादित्याय व्यानाय स्वाहा। इदमादित्याय व्यानाय—इदं न मम ॥ ३ ॥

ओं भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः प्राणापान-व्यानेभ्यः स्वाहा। इदमग्निवाय्वादित्येभ्यः प्राणा-पानव्यानेभ्यः—इदं न मम ॥ ४ ॥

ओम् आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरों स्वाहा ॥ ५ ॥

ओं यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते। तया मामद्य मेधयाऽग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा ॥ ६ ॥

—यजुः० ३२ । १४ ॥

ओं विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव। यद् भद्रं तन्न आ सुव स्वाहा ॥ ७ ॥ —यजुः० ३० । ३ ॥

ओम् अग्ने नय सुपथा रायेऽअस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्। युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नम उक्तिं विधेम स्वाहा ॥८ ॥[१]

—यजुः० ४० । १६ ॥

पूर्णाहुतिप्रकरण

आघारावाज्याहुतिमन्त्रः

ओम् अग्नये स्वाहा ॥ इदमग्नये—इदं न मम ॥

इस मन्त्र से वेदी के दक्षिण-भाग अग्नि में,

ओं सोमाय स्वाहा ॥ इद सोमाय—इदं न मम ॥

—गो० गृ० १ । ८ । २४ ॥

आज्याभागाहुतिमन्त्रः

ओं प्रजापतये स्वाहा। इदं प्रजापतये—इदं न मम ॥

ओम् इन्द्राय स्वाहा। इदमिन्द्राय—इदं न मम ॥

इन दो मन्त्रों से वेदी के मध्य में आहुति देनी, उसके पश्चात् उसी घृतपात्र में से स्रुवा को भरके प्रज्वलित समिधाओं पर व्याहृति की चार आहुति देवें—

---

१. सामग्री की आहुति केवल प्रातः और सायंकालीन मन्त्रों से देनी है। शेष सब घृत-आहुतियाँ हैं। हाँ, यदि गायत्री अथवा 'विश्वानि देव' मन्त्र से अधिक आहुतियाँ देनी हों तो घृत के साथ सामग्री की आहुतियाँ भी दी जानी चाहियें।

व्याहृत्याहुतिमन्त्राः

ओं भूरग्नये स्वाहा ॥ इदमग्नये—इदं न मम ॥१ ॥

ओं भुवर्वायवे स्वाहा ॥ इदं वायवे—इदं न मम ॥ २ ॥

ओं स्वरादित्याय स्वाहा ॥ इदमादित्याय—इदं न मम ॥ ३ ॥

ओं भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः स्वाहा ॥ इदमग्निवाय्वादित्येभ्य—इदं न मम ॥ ४ ॥

ये चार घी की आहुति देकर स्विष्टकृत् होमाहुति एक ही दें; यह घृत अथवा भात की देनी चाहिए; उसका मन्त्र—

स्विष्टकृदाहुतिमन्त्रः

ओं यदस्य कर्मणोऽत्यरीरिचं यद्वा न्यूनमिहाकरम्। अग्निष्टत्स्विष्टकृद्विद्यात्सर्वं स्विष्टं सुहुतं करोतु मे। अग्नये स्विष्टकृते सुहुतहुते सर्वप्रायश्चित्ताहुतीनां कामानां समर्द्धयित्रे सर्वान्नः कामान्त्समर्द्धय स्वाहा। इदमग्नये स्विष्टकृते—इदं न मम ॥

—आश्व० १ । १० । २२; शतपथ ब्रा० १४ । ९ । ४ । २४ ॥

इससे एक आहुति करके प्राजापत्याहुति अगले मन्त्र को मन में बोलके देनी चाहिए—

प्राजापत्याहुतिमन्त्रः

ओं प्रजापतये स्वाहा। इदं प्रजापतये—इदं न मम॥

इससे मौन करके एक आहुति देकर चार आज्याहुति घृत की देवें—

आज्याहुतिमन्त्राः (पवमानाहुतयः)

ओं भूर्भुवः स्वः। अग्न आयूंषि पवस आ सुवोर्जमिषं च नः। आरे बाधस्व दुच्छुनां स्वाहा॥ इदमग्नये पवमानाय—इदन्न मम॥ १॥

—ऋ० ९। ६६। १९॥

ओं भूर्भुवः स्वः। अग्निर्ऋषिः पवमानः पाञ्चजन्यः पुरोहितः। तमीमहे महागयं स्वाहा॥ इदमग्नये पवमानाय—इदन्न मम॥ २॥

—ऋ० ९। ६६। २०॥

ओं भूर्भुवः स्वः। अग्ने पवस्व स्वपा अस्मे वर्चः सुवीर्यम्। दधद्रयिं मयि पोषं स्वाहा॥ इदमग्नये पवमानाय—इदन्न मम॥ ३॥

—ऋ० ९। ६६। २१॥

ओं भूर्भुवः स्वः। प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परि ता बभूव। यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणां स्वाहा॥ इदं प्रजापतये—इदन्न मम॥ ४॥ —ऋ० १०। १२१। १०॥

तत्पश्चात् घृतसहित लवणान्न लेके—

शुनां च पतितानां च श्वपचां पापरोगिणाम्।
वायसानां कृमीणां च शनकैर्निर्वपेद् भुवि॥

—मनु० ३।९२॥

अर्थ—कुत्ते, पतित, चाण्डाल, पापरोगी, काक और कृमि—इन छह नामों से छह भाग पृथिवी में धरे, और छह भाग जिस-जिस नाम के हों उस-उस को देवे।

॥ इति बलिवैश्वदेवविधिः ॥

(५) अथ अतिथियज्ञः

तद्यस्यैवं विद्वान् व्रात्योऽतिथिर्गृहानागच्छेत्॥ १॥

स्वयमेनमभ्युदेत्य ब्रूयाद् व्रात्य क्वा-वात्सीर्व्रात्योदकं व्रात्य तर्पयन्तु व्रात्य यथा ते प्रियं तथास्तु व्रात्य यथा ते वशस्तथास्तु व्रात्य यथा ते निकामस्तथाऽस्त्विति॥ २॥

—अथर्व० १५।११।१-२॥

जब पूर्ण विद्वान् परोपकारी सत्योपदेशक, गृहस्थों के घर आवें, तब गृहस्थ लोग स्वयं समीप जाकर उक्त विद्वानों को प्रणाम आदि करके उत्तम आसन पर बैठाकर पूछें कि कल के दिन आपने कहाँ निवास किया था? हे ब्रह्मन्! जलादि पदार्थ जो आपको अपेक्षित हों ग्रहण कीजिए, और हम लोगों को अपने सत्योपदेश से तृप्त कीजिए।

जो धार्मिक, परोपकारी, सत्योपदेशक, पक्षपातरहित, शान्त, सर्वहितकारक विद्वानों की अन्नादि से सेवा एवं उनसे प्रश्नोत्तर आदि करके विद्या प्राप्त करना अतिथियज्ञ कहाता है, उसे नित्यप्रति किया करें।

इन पंचमहायज्ञों को स्त्री और पुरुष दोनों प्रतिदिन किया करें।

भोजन का मन्त्र

ओम् अन्नपतेऽन्नस्य नो देह्यनमीवस्य शुष्मिणः। प्र प्र दातारं तारिष ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुष्पदे ॥ —यजुः० ११।८३॥

यज्ञोपवीत धारण करने का मन्त्र

ओं यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत्सहजं पुरस्तात्। आयुष्यमग्र्यं प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः ॥ १ ॥ —पार० गृह्य० २।२।११

यज्ञोपवीतमसि यज्ञस्य त्वा यज्ञोपवीतेनोपनह्यामि ॥ २ ॥ —पार० गृह्य० २।२।११॥

□

सत्सङ्ग भजन

राष्ट्रीय प्रार्थना (१)

ओ३म् आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायतामा राष्ट्रे राजन्युः शूरऽ इषव्योऽतिव्याधी महारथो जायतां दोग्ध्री धेनुर्वोढाऽनड्वानाशुः सप्तिः पुरन्धिर्योषा जिष्णू रथेष्ठाः सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायतां निकामे-निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो नऽ ओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम्॥ —यजुः० २२। २१॥

भजन-२

ब्रह्मन्! स्वराष्ट्र में हों, द्विज ब्रह्म तेजधारी।
क्षत्रिय महारथी हों, अरिदल विनाशकारी॥
होवें दुधारू गौएँ, पशु अश्व आशुवाही।
आधार राष्ट्र की हों, नारी सुभग सदा ही॥
बलवान् सभ्य, योद्धा, यजमान पुत्र होवें।
इच्छानुसार वर्षे, पर्जन्य ताप धोवें॥
फल-फूल से लदी हों, औषध अमोघ सारी।
हो योग-क्षेमकारी, स्वाधीनता हमारी॥

भजन-३

पूजनीय प्रभो हमारे भाव उज्ज्वल कीजिये।
छोड़ देवें छल-कपट को मानसिक बल दीजिये ॥ १ ॥
वेद की बोलें ऋचायें सत्य को धारण करें।
हर्ष में हों मग्न सारे शोक-सागर से तरें ॥ २ ॥
अश्वमेधादिक रचायें यज्ञ पर-उपकार को।
धर्म-मर्यादा चलाकर लाभ दें संसार को ॥ ३ ॥
नित्य श्रद्धा-भक्ति से यज्ञादि हम करते रहें।
रोग-पीड़ित विश्व के सन्ताप सब हरते रहें ॥ ४ ॥
भावना मिट जाय मन से पाप-अत्याचार की।
कामनाएँ पूर्ण होवें यज्ञ से नर-नारि की ॥ ५ ॥
लाभकारी हों हवन हर जीवधारी के लिए।
वायु-जल सर्वत्र हों शुभ गन्ध को धारण किये ॥ ६ ॥
स्वार्थ-भाव मिटे हमारा, प्रेम-पथ-विस्तार हो।
'इदन्न मम' का सार्थक प्रत्येक में व्यवहार हो ॥ ७ ॥
प्रेमरस में तृप्त होकर वन्दना हम कर रहे।
नाथ करुणारूप करुणा आपकी सब पर रहे ॥ ८ ॥

भजन-४

हे दयामय हम सबों को शुद्धताई दीजिये।
दूर करके हर बुराई को भलाई दीजिये ॥ टेक ॥
कीजिये ऐसा अनुग्रह हम पै हे परमात्मा !
हों सभासद् इस सभा के सब के सब धर्मात्मा ॥ १ ॥
हो उजाला सब के मन में ज्ञान के प्रकाश से।
और अँधेरा दूर सारा हो अविद्या-नाश से ॥ २ ॥

खोटे कर्मों से बचें और तेरे गुण गावें सभी ।
छूट जावें दुःख सारे, सुख सदा पावें सभी ॥ ३ ॥
सारी विद्याओं को सीखें ज्ञान से भरपूर हों ।
शुभ कर्म में होवें तत्पर दुष्ट गुण सब दूर हों ॥ ४ ॥
यज्ञ-हवन से हो सुगन्धित अपना भारतवर्ष देश ।
वायु-जल सुखदायी होवें जायँ मिट सारे क्लेश ॥ ५ ॥
वेद के प्रचार में होवें सभी पुरुषार्थी ।
होवे आपस में प्रीति और बनें परमार्थी ॥ ६ ॥
लोभी कामी और क्रोधी कोई भी हम में न हो ।
सर्व व्यसनों से बचें और छोड़ देवें मोह को ॥ ७ ॥
अच्छी संगत में रहें और वेद-मारग पर चलें ।
तेरे ही होवें उपासक और कुकर्मों से बचें ॥ ८ ॥
कीजिये हम सबका हृदय शुद्ध अपने ज्ञान से ।
मान भक्तों में बढ़ाओ अपने भक्ति-दान से ॥ ९ ॥

भजन-५

आज मिल सब गीत गाओ उस प्रभु के धन्यवाद ।
जिसका यश नित गाते हैं गन्धर्व मुनिजन धन्यवाद ॥
मन्दिरों में कन्दरों में पर्वतों के शिखर पर ।
पाते हैं आनन्द मिल गाते हैं स्वर भर धन्यवाद ॥
कूप में तालाब में सागर की गहरी धार में ।
प्रेम-रस में तृप्त हो करते हैं जलचर धन्यवाद ॥
शादियों में कीर्तनों में यज्ञ और उत्सव के आदि ।
मीठे स्वर में चाहिए करें नारि-नर सब धन्यवाद ॥
गान कर 'अमीचन्द' भजनानन्द ईश्वर-स्तुति ।
ध्यान धर सुनते हैं श्रोता कान धर-धर धन्यवाद ॥

भजन-६

तुम्हारी कृपा सें जो आनन्द पाया,
वाणी से जाये वह क्योंकर बताया ।
नहीं है यह वह रस जिसे रसना चाखे,
नहीं रूप उसका कभी दृष्टि आया ।
नहीं है वह गुण गन्ध जो घ्राण जाने,
त्वचा से न जाये छुआ औ छुवाया ।
संख्या में आना असम्भव है उसका,
दिशा-काल में भी रहे ना समाया ।
तुझ-सा न दाता है, तुझ-सा न दानी,
इतना बड़ा दान जिसने दिलाया ।
आत्मोन्नति में तुम्हारी दया से,
मेरी जिन्दगी ने अजब पलटा खाया ।
सत् चित आनन्द अनन्त स्वरूप,
मुझे मेरे अनुभव ने निश्चय कराया ।
गूँगे की रसना के सदृश 'अमीचन्द'
कैसे बतायें कि क्या रस उड़ाया ।

भजन-७

शरण प्रभु की आओ रे, यही समय है प्यारे ॥
आओ प्रभु-गुण गाओ रे, यही समय है प्यारे ॥
उदय हुआ ओं नाम का भानु, आओ दर्शन पाओ रे ॥
अमृत झरना झरता इससे, पीकर अमर हो जाओ रे ॥
छल-कपट और झूठ को त्यागो, सत्य में चित्त लगाओ रे ॥
प्रभु की भक्ति बिन नहीं मुक्ति, दृढ़ विश्वास जमाओ रे ॥
कर लो प्रभु-नाम का सुमिरन, नहीं पीछें पछताओ रे ॥
छोटे-बड़े सब मिल के खुशी से, गुण ईश्वर के गाओ रे ॥

इनसे घृत की चार आहुति करके 'अष्टाज्याहुति' के निम्नलिखित मन्त्रों से सर्वत्र मंगल-कार्यों में ८ (आठ) आहुति देवें। वे आठ आहुतिमन्त्र ये हैं—

अष्टाज्याहुतिमन्त्राः

ओं त्वं नोऽअग्ने वरुणस्य विद्वान् देवस्य हेळोऽव यासिसीष्ठाः। यजिष्ठो वह्नितमः शोशुचानो विश्वा द्वेषाँसि प्र मुमुग्ध्यस्मत् स्वाहा॥ इदमग्नीवरुणाभ्याम्—इदं न मम॥ १॥ —ऋ० ४। १। ४॥

ओं स त्वं नो अग्नेऽवमो भवोती नेदिष्ठोऽअस्या उषसो व्युष्टौ। अव यक्ष्व नो वरुणं रराणो वीहि मृळीकं सुहवो न एधि स्वाहा॥ इदमग्नीवरुणाभ्यां—इदं न मम॥ २॥ —ऋ० ४। १। ५॥

ओम् इमं मे वरुण श्रुधी हवमद्या च मृळय। त्वामवस्युरा चके स्वाहा॥ इदं वरुणाय—इदं न मम॥ ३॥ —ऋ० १। २५। १९॥

ओं तत्त्वा यामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदाशास्ते यजमानो हविर्भिः। अहेळमानो वरुणेह बोध्युरुशंस मा न आयुः प्र मोषीः स्वाहा॥ इदं वरुणाय—इदं न मम॥ ४॥ —ऋ० १। २४। ११॥

ओं ये ते शतं वरुण ये सहस्रं यज्ञियाः पाशा वितता महान्तः। तेभिर्नोऽअद्य सवितोत विष्णुर्विश्वे मुञ्चन्तु मरुतः स्वर्काः स्वाहा॥ इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्योः मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यः—इदं न मम॥ ५॥ —कात्या० श्रौ० २५।१।१०॥

ओम् अयाश्चाग्नेऽस्यनभिशस्ति पाश्च सत्यमित्त्वमया असि। अया नो यज्ञं वहास्यया नो धेहि भेषज स्वाहा॥ इदमग्नये अयसे—इदं न मम॥ ६॥ —कात्या० श्रौ० २५-१।११॥

ओम् उदुत्तमं वरुण पाशमस्मदवाधमं वि मध्यमं श्रथाय। अथा वयमादित्य व्रते तवानागसो अदितये स्याम स्वाहा॥ इदं वरुणायाऽऽदित्यायाऽदितये च—इदं न मम॥ ७॥ —ऋ० १।२४।१५॥

ओं भवतन्नः समनसौ सचेतसावरेपसौ। मा यज्ञ हि सिष्टं मा यज्ञपतिं जातवेदसौ शिवौ भवतमद्य नः स्वाहा॥ इदं जातवेदोभ्याम्—इदं न मम॥ ८॥ —यजुः० ५।३॥

पुनः निम्नलिखित मन्त्र से पूर्णाहुति करें, स्रुवा को घृत से भरके—

ओं सर्वं वै पूर्णꣳ स्वाहा॥

इस मन्त्र से एक आहुति देवें। ऐसे ही दूसरी और तीसरी आहुति देवें।

पूर्णमासी की आहुतियाँ

ओम् अग्नये स्वाहा ।। १ ।।
ओम् अग्नीषोमाभ्यां स्वाहा ।। २ ।।
ओं विष्णवे स्वाहा ।। ३ ।।

अमावस्या की आहुतियाँ

ओम् अग्नये स्वाहा ।। १ ।।
ओम् इन्द्राग्नीभ्यां स्वाहा ।। २ ।।
ओं विष्णवे स्वाहा ।। ३ ।।

(३) अथ पितृयज्ञः

अग्निहोत्र के पश्चात् पितृयज्ञ है । पितृयज्ञ अर्थात् जीते माता, पिता, आचार्य, गुरु, उपाध्याय आदि मान्यों की यथावत् सेवा करना पितृयज्ञ कहलाता है ।

इति पितृयज्ञः ॥

(४) अथ भूतयज्ञः (बलिवैश्वदेव)

निम्नलिखित दस मन्त्रों से घृत-मिश्रित भात की, यदि भात न बना हो तो क्षार और लवणान्न को छोड़कर पाकशाला में जो कुछ भोजन बना हो, उसी की आहुति करें—

ओम् अग्नये स्वाहा ।। ओं सोमाय स्वाहा ।। ओम् अग्नीषोमाभ्यां स्वाहा ।। ओं विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा ।। ओं धन्वन्तरये स्वाहा ।। ओं कुह्वै स्वाहा ।। ओमनुमत्यै स्वाहा ।। ओं प्रजापतये स्वाहा ।। ओं द्यावापृथिवीभ्याꣳ स्वाहा ।। ओं स्विष्टकृते स्वाहा ।।

तत्पश्चात् निम्नलिखित मन्त्रों से बलिदान करें। एक पत्तल व थाली में यथोक्त दिशाओं में भाग रखना। यदि भाग रखने के समय कोई अतिथि आ जाय तो उसी को देना, अथवा अग्नि में डालना चाहिए—

भाग रखने के मन्त्र

ओं सानुगायेन्द्राय नमः ॥ १ ॥ —इससे पूर्व

ओं सानुगाय यमाय नमः ॥ २ ॥ —इससे दक्षिण

ओं सानुगाय वरुणाय नमः ॥ ३ ॥—इससे पश्चिम

ओं सानुगाय सोमाय नमः ॥ ४ ॥ —इससे उत्तर

ओं मरुद्भ्यो नमः ॥ ५ ॥ —इससे द्वार

ओं अद्भ्यो नमः ॥ ६ ॥ —इससे जल

ओं वनस्पतिभ्यो नमः ॥ ७ ॥ —इससे मूसलोखल

ओं श्रियै नमः ॥ ८ ॥ —इससे ईशान

ओं भद्रकाल्यै नमः ॥ ९ ॥ —इससे नैर्ऋत्य

ओं ब्रह्मणे नमः ॥ १० ॥

ओं वास्तुपतये नमः ॥ ११ ॥ —इनसे मध्य

ओं विश्वेभ्यो देवेभ्यो नमः ॥ १२ ॥ ओं दिवाचारिभ्यो भूतेभ्यो नमः ॥ १३ ॥ ओं नक्तंचारिभ्यो भूतेभ्यो नमः ॥ १४ ॥ —इनसे ऊपर

ओं सर्वात्मभूतये नमः ॥ १५ ॥ —इससे पृष्ठ

ओं पितृभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधा नमः ॥ १६ ॥

—इससे दक्षिण

—मनु० २ । ८७—९१ ॥